उत्तर वैदिक काल में आर्यों का आर्थिक जीवन

Course – M.A. History, Part – I, Paper – III; Prepared by – Dr. P.K. Poddar

पूर्व वैदिक काल और उत्तर वैदिक काल को अगर देखा जाय तो हम पाते हैं कि आर्यों की स्थिति में धीरे-धीरे परिवर्तन नजर आता है। राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक स्थिति की तरह ही उत्तर वैदिक काल में आर्थिक क्षेत्र में काफी परिवर्तन देखने को मिलते हैं। उत्तर वैदिक काल में पूर्व वैदिक काल की तुलना में आर्थिक क्षेत्र में बहुत परिवर्तन नजर आता है।

पुरातात्विक प्रमाणों से पता चलता है कि 900 ई० पू० के आस-पास आर्यों को लोहे का ज्ञान प्राप्त हो चुका था। उत्तर वैदिक ग्रन्थों में लोहे को 'श्याम' अथवा 'कृष्ण अयस' कहा गया है। लोहे की मदद से कृषि में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। कृषि सम्बन्धी लोहे के औजार बहुत थोड़े मिले हैं, परन्तु इसमें संदेह नहीं कि उत्तर वैदिक कालीन लोगों की जीविका का मुख्य साधन कृषि ही था। कुछ वैदिक ग्रन्थों में छः, आठ, बारह और यहाँ तक कि चौबीस बैलों द्वारा जोते जाने वाले हलों के उल्लेख मिलते हैं। इसमें अतिशयोक्ति हो सकती है। हलों के फाल लकड़ी के होते थे, उत्तरी गंगा की नरम मिट्टी में इनसे सम्भवतः काम चल जाता था। धीरे-धीरे कृषि में लोहे के औजारों के प्रयोग से अतिरिक्त उत्पादन (Surplus production) बढ़ा जिसके आधार पर नए उद्योग-धंधों एवं व्यापार-वाणिज्य को भी प्रश्रय मिला। डा० आर० एस० शर्मा का मत है कि "यज्ञों में होने वाली पशु-बलि के कारण पर्याप्त बैल उपलब्ध नहीं हो सकते थे इसलिए कृषि आदिम स्तर की थी, पर इसमें संदेह नहीं कि अब यह व्यापक पैमाने पर होती थी।" शतपथ ब्राह्मण में हल की जुताई से सम्बन्धित अनुष्ठानों के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है। खेतों की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए गोबर का खाद

प्रयोग में आने लगा। सिंचाई के लिए पानी नालियों के द्वारा खेतों तक पहुँचाया जाता था। विभिन्न फसलों के बोने और उनके काटने का समय भी निश्चित हो गया था। वैदिक लोग "जौ" पैदा करते रहे, परन्तु इस काल में उनकी मुख्य पैदावार धान और गेहूँ बन गया। कालांतर में गेहूँ का स्थान प्रमुख हो गया। दोआब में पहुँचने पर वैदिक लोगों को चावल की भी जानकारी मिली। हस्तिनापुर से चावल के जो अवशेष मिले हैं वे ईसा पूर्व आठवीं सदी के हैं। अनुष्ठानों में चावल के उपयोग के विधान मिलते हैं। परन्तु गेहूँ का अनुष्ठानों में बहुत कम इस्तेमाल होता है। उत्तर वैदिक काल में कई किस्म की दालें भी उगाई जाती थीं; जैसे — उड़द, मूंग, मसूर आदि।

यद्यपि कृषि अब आर्यों का मुख्य पेशा बन गया था फिर भी पशुपालन को छोड़ नहीं दिया गया। अभी भी उनका दूसरा महत्त्वपूर्ण पेशा पशु पालन ही था। गाय, बैल, भेड़, बकरी, घोड़ा, कुत्ता आदि अभी भी मुख्य पालतू पशु थे। धनी व्यक्तियों और राजाओं के पास पशु काफी मात्रा में थे। उत्तर वैदिक समाज में गायों की पूजा होती थी। गाय का अभी भी दूध के कारण आर्थिक महत्व था। पशुओं को चराने के लिए गाँव से सटे हुए अलग मैदान की व्यवस्था थी।

इनके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के व्यवसायों का जिक्र साहित्यिक ग्रन्थों में मिलता है, जैसे — मछुआ, सारथी, गड़ेरिया, स्वर्णकार, मणिकार, रस्सी बुनने वाला, टोकरी बुनने वाला, धोबी, लुहार, कुम्भकार, नाई, रंगसाज, जुलाहे इत्यादि। नटों तथा बांसुरी बजाने वालों का जिक्र भी शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। नाविकों एवं नाव बनाने वालों का भी उल्लेख किया गया है। इस समय ऊनी कपड़ों का निर्माण विशेषरूप से होने लगा था।

बुनाई का काम केवल स्त्रियाँ करती थीं; फिर भी यह काम बड़े पैमाने पर होता था। मिट्टी के बर्तन बनाने का व्यवसाय भी काफी बढ़ा-चढ़ा था। उत्तर वैदिक साहित्य में अनेक स्थलों पर कुलालों (Potters) एवं कुलाल-चक्रों (Potters wheel) का जिक्र मिलता है। उत्तर वैदिक काल के लोग चार प्रकार के मिट्टी के बर्तनों से परिचित थे: काले व लाल भांड, काले रंग के भांड, चित्रित धूसर भांड और लाल भांड। चित्रित धूसर भांड इस युग के विशिष्ट भांड थे। इनमें कटोरे और थालियाँ मिली हैं; जिनका इस्तेमाल पूजा-पाठ अथवा भोजन दोनों के लिए होता था, परन्तु केवल उच्च वर्णों के लोगों द्वारा। चित्रित धूसर भांडों के साथ कांच की जो वस्तुएँ और कंकण मिले हैं उनका इस्तेमाल भी उच्च वर्ग के सदस्य ही करते होंगे। पुरातात्विक खुदाई और वैदिक ग्रन्थों से विशिष्ट शिल्पों के अस्तित्व के बारे में जानकारी मिलती है। उत्तर वैदिक काल के ग्रन्थों में जौहरियों के भी उल्लेख मिलते हैं। ये संभवतः समाज के धनी लोगों की जरूरतों को पूरा करते थे। आर्य सोना, चाँदी, ताँबा तथा लोहे का भी व्यवसाय करने लगे थे। इस प्रकार विभिन्न व्यवसायों की संख्या में उत्तर वैदिक काल में विशेष प्रगति हुई। कृषि और विविध शिल्पों के कारण उत्तर वैदिक काल के लोग अब स्थायी जीवन बिताने लग गए थे। पुरातात्विक खुदाई तथा अन्वेषण से हमें उत्तर वैदिक काल की बस्तियों के बारे में कुछ जानकारी मिलती है। लोग मिट्टी की ईंटों के घरों में अथवा लकड़ी के खम्भों पर आधारित टट्टर और और लेप के घरों में रहते थे। यद्यपि उनके घर घटिया किस्म के थे; परन्तु चूल्हों और अनाजों

(चावल) के अवशेषों से पता चलता है कि चित्रित धूसर भांडों का इस्तेमाल करनेवाले उत्तर वैदिक कालीन लोग खेती करते थे और स्थायी जीवन बिता रहे थे। परन्तु वे लोग लकड़ी के हल-फालों से खेत जोतते थे, इसलिए किसान इतना अधिक पैदा नहीं कर पाता था कि दूसरे पेशों में लगे हुए लोगों को खिला पाये। किसान नगरों के उत्थान में अधिक योग देने में अभी समर्थ नहीं थे।

इस काल के साहित्यिक ग्रन्थों में श्रेष्ठी, गण, और गणपति जैसे शब्दों का उल्लेख मिलता है। ये शब्द संभवतः किसी प्रकार के व्यावसायिक संगठनों की ओर इंगित करते हैं। यद्यपि इन संस्थाओं की कार्य-प्रणाली के विषय में विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है फिर भी परवर्ती साहित्यिक साक्ष्यों को देखते हुए ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि समान व्यवसाय के अनुसार विभिन्न व्यवसायियों के संगठन बन गए थे जो अपने-अपने व्यवसाय की देखभाल करते थे और अपने हितों की रक्षा करते थे।

संभवतः इस काल में व्यापार-वाणिज्य का भी विकास हुआ। वैदिक ग्रन्थों में समुद्र और समुद्र-यात्रा के उल्लेख मिलते हैं। इससे पता चलता है कि नई कलाओं और शिल्पों की प्रेरणा से एक किस्म का व्यापार शुरु हो गया था। अतिरिक्त उत्पादन ने इस व्यापार को बढ़ावा दिया। व्यापार जल एवं स्थल दोनों ही मार्गों से हुआ करते थे। वाजसनेयी संहिता, तैत्तरीय ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में 100 पतवार वाली नावों एवं वणिज (व्यापारी) का उल्लेख किया गया है। सिक्कों का अभी भी प्रचलन नहीं हुआ था। विनिमय के द्वारा व्यापार किया जाता था। कर्ज देने एवं सूद लेने की प्रथा प्रचलित हो चुकी थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्तर वैदिक युग में आर्यों के आर्थिक जीवन में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे। पशुचारी और अर्ध-घुमन्तू जीवन अतीत की चीज हो गयी थी, और जीवन स्थायी एवं स्थिर हो गया था। विविध कलाओं और शिल्पों से परिचित वैदिक लोग अब उत्तरी गंगा के मैदानों में स्थायी रूप से बस गए थे। इन मैदानों में बसे हुए किसान अपनी जीविका के लिए पर्याप्त अनाज पैदा कर लेते थे, और राजाओं और पुरोहितों की जीविका के लिए भी कुछ उपज बचा लेते थे। इस प्रकार पहले की अपेक्षा उनकी आर्थिक अवस्था अब ज्यादा सुदृढ़ थी परन्तु अभी भी अर्थव्यवस्था मुख्यतः ग्रामीण ही थी। शहरी अर्थव्यवस्था का अभी भी विकास नहीं हो सका था; हालांकि इसके लिए वातावरण एवं परिस्थितियाँ तैयार हो रही थीं। अतः हम कह सकते हैं कि उत्तर वैदिक युग की अर्थव्यवस्था प्राक-शहरी अर्थव्यवस्था (Proto-Urban economy) थी।